शोध मंथन Vol. XIV No.IV Oct.-Dec. 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:shodhmanthan.anubooks.com*

सूरदास के काव्य में चित्रित जीवन का राग

प्राप्तिः 28.10.2023
स्वीकृतः 25.11.2023

डॉ० सुमन सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
राजकीय महिला महाविद्यालय, खरखौदा, मेरठ
ईमेलः *sumansinghverma1978@gmail.com*

102

सारांश

हिंदी साहित्य में श्री कृष्ण की भक्ति भावना से अनुप्राणित होकर काव्य की एक बड़ी ही प्रबल और प्रशस्त धारा प्रवाहित हुई। इस धारा का मूल उदगम जयदेव के गीत गोविंद और विद्यापति के भक्ति पदों में से माना जाता है, उसी क्रम में ब्रज की उस भूमि के अनेक कवियों ने उसी ब्रजभाषा में कृष्ण– लीला का गायन किया, जिस भूमि और भाषा में श्री कृष्ण ने लीलाएं की थी । वल्लभाचार्य की शिष्य परंपरा में आठ कवियों ने कृष्ण–लीला का गायन किया है, जिन्हें अष्टछाप के कवि कहा जाता है । ये सभी वल्लभाचार्य के पुष्टि मार्ग में दीक्षित थे । इनमें सूरदास, नंददास, परमानंददास, चतुर्भुज दास, कुम्भनदास, कृष्ण दास, छीत स्वामी और गोविंद स्वामी की गणना की जाती है । निश्चय ही इन कवियों में सूरदास का स्थान सर्वोपरि है। उनकी एकमात्र प्रामाणिक रचना सूरसागर है इसमें संगीत की इतनी राग–रागिनियां समाहित हैं कि आज उनका नामकरण भी संभव नहीं है। सूर के भावों में वह गहराई है कि मीमांसको ने भाव गांभीर्य की दृष्टि से इन्हें तुलसीदास से भी बड़ा स्थान दिया है। सूरदास जी जन्म से ही अंधे कहे जाते हैं पर अपनी अंधी आंखों से उन्होंने श्रृंगार और वात्सल्य का कोना–कोना झांक लिया। उनके काव्य में अलंकारों, शब्द शक्तियों और भाषिक संवेदना का जो रूप प्राप्त होता है वह अतुलनीय है। सूरदास ने कोई प्रबंध काव्य नहीं लिखा पर उनकी कीर्ति अक्षय और अमर है। सूरदास के काव्य में जीवन का राग कृष्ण के प्रति अटूट भक्ति, वात्सल्य और श्रृंगार की त्रिवेणी के रूप में प्रवाहित हुई है, उन्होंने कृष्ण की बाल–लीलाओं, रूप सौंदर्य, प्रेम और विरह का मार्मिक वर्णन किया है। उनकी भक्ति सख्य–भाव (सखा–भाव) पर आधारित है जिसमें वह कृष्ण को अपना मित्र मानते हैं और उनके साथ मित्रवत व्यवहार करते हैं। सूरदास ने अपने काव्य में लोक जीवन को भी स्थान दिया है। ब्रज की संस्कृति, लोक व्यवहार, रीति रिवाज, पर्व, त्यौहार सभी कुछ उनकी कविता में प्रतिबिंबित होते हैं।

मुख्य बिन्दु

भक्ति, वात्सल्य, श्रृंगार, कृष्ण, राधा, यशोदा, गोपियाँ, सूरसागर, संस्कार, बाललीला, ब्रजभूमि, लोकगीत, ब्रजभाषा

प्रस्तावना

सूरदास अष्टछाप के आधार स्तम्भ हैं। गीतिकाव्य की दृष्टि से सूर का स्थान मध्य कालीन हिन्दी साहित्य में सर्वश्रेष्ठ है। प्रबन्ध की सुष्ठु योजना न कर सकने पर भी महाकवि सूरदास गीतों

के सम्राट कहे जाते हैं। सूरदास गीतरत्नों के आगार हैं, उनकी प्रभा सदैव अमलिन है। लोकगीतों की सुदीर्घ परम्परा का परिभ्रमण कर उन्होंने लोकगीतों का निर्माण किया है। जयदेव के गीत गोविन्द की जो परम्परा विद्यापति के गीतों में दिखायी पड़ी और विद्यापति के मधुर स्वरों से हिन्दी की जिस गीत धारा का प्रस्रवण हुआ वह सूरसागर में पहुँच कर वही मानों अपनी समृद्धि और वैभव से मुस्कुरा उठी। अनुभूति की निश्छल अभिव्यंजना, संगीत के पंखों और कोमल कल्पनाओं के इन्द्रधनुष से अनुरंजित हो, अपनी ही मधुरिमा में अलौकिक हो उठी। अभूतपूर्व बिम्ब योजना, सूक्ष्म चित्रांकन, सशक्त शब्दचयन, ध्वन्यात्मकता, रसपूर्ण पदावली, संगीत की मधुर झंकृति और प्रगाढ़ अनुभूतियों का अविरल रसश्रोत सब कुछ मिलाकर सूरसागर गीतिरचनाओं में सिरमौर हो गया है। इस सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल ने लिखा है कि ''सूरदास के गीतों में प्रौढ़ रचना इसका संकेत करती है कि उनके पहले गीतों में बहुत कुछ लिखा गया होगा। यह भी संभव है कि गीत परम्परा मौखिक रही होगी। इस सम्बन्ध में दो बातें विचारणीय हैं– एक राधा–कृष्ण सम्बन्धी काव्य की परम्परा, दूसरे गीतों की परम्परा। इन दोनों को एक में मिलाना ठीक नहीं जान पड़ता। यह तो पूर्वविदित है कि जयदेव ने संस्कृत में गीत लिखने का प्रचलन किया और अपने गीतों का वर्ण्य विषय राधाकृष्ण को रखा। यही नहीं जयदेव से पूर्व राधाकृष्ण सम्बन्धी रचनाएँ गीतों में और तत्कालीन जनभाषा या पुरानी हिन्दी में होती थीं। जयदेव ने उन्हीं की देखा–देखी संस्कृत साहित्य में गीत की रचना की जिसे आगे चलकर सूरदास ने विस्तृत भाव–भूमि प्रदान की''।[1]

विषयवस्तु

सूरदास की कविता का प्रथम गुण है माधुर्य। उन्होंने अपने पद ब्रजभाषा में लिखे हैं। सूरदास स्वभावतः ही गायनाचार्य थे। इसलिए उन्होंने जितने पद लिखे हैं, उनमें संगीत की ध्वनि इतनी सुमधुर रीति से समाई है कि वे पद संगीत के जीते–जागते अवतार से हो गये हैं। कोमलता ने प्रत्येक शब्द में वास कर लिया है।[2]

सूरदास ने साहित्यिक गीतों के साथ ही लोकगीतों का निर्माण किया है। रसिया, होली, सोहिलो, मल्हार, ज्यौनार, जन्म–बधाई आदि ब्रजभूमि के सभी प्रचलित लोकगीतों की सहज स्वाभाविक रचना की है। सूरसागर की सबसे बड़ी विशेषता इस बात में है कि यह विशाल ग्रन्थ गीतकाव्यों का संग्रह होकर भी प्रबन्धात्मकता के तंतु में बँधा हुआ है। बाललीला, माखनचोरी, नागलीला, दावानल, पानलीला, मुरली, राधाकृष्ण मिलन, गोदोहन, चीरहरण, जलक्रीड़ा, मानलीला, दानलीला आदि से सम्बद्ध पद गीतिकाव्य के विशुद्ध उदाहरण हैं। तीव्र भावानुभूति, सरस शब्दों के सहारे उमड़ पड़ी है। गीत के वर्णनों में इतनी सूक्ष्मता है कि चित्र आँखों के सामने प्रत्यक्ष हो उठते हैं। प्रार्थना या विनय के पदों में इनका दैन्य, निराभिमानता पूर्ण आत्मसमर्पण, अक्खड़ कृष्णभक्ति का परिचय देता है। इनके गीतों में ब्रज की ग्रामीण और प्राकृतिक पृष्ठभूमि भी स्पष्ट हो गयी है।

सूर के गीतों में भावपूर्ण वर्णनात्मकता मिलती है, जो शास्त्रीय राग–रागिनियों में बँधी हुयी है। हरिदास, तानसेन या बैजूबावरा के गीतों से भिन्न सूर के गीतों में संगीत, काव्य का सहायक है। शास्त्रीयता के भार से कवित्व दबा नहीं है अपितु इनका संगीत भाव–भूमि निर्माण कर इसे सहज संवेदनशील बनाता है। विनय, क्रीड़ा, केलि, विरह आदि के प्रसंग में भी कवि की आत्माभिव्यंजना प्रबल हो उठी है। इनके गीतों में रागात्मक अनुभूति पूर्ण मात्रा में है जो स्वतः अन्तःप्रेरित है।

आचार्य शुक्ल ने सूरसागर को किसी चली आती गीतकाव्य परम्परा का पूर्ण विकास कहा है।[3] लोकगीत का सम्बन्ध जन सामान्य में प्रचलित गीतों से है। इनकी परम्परा मौखिक है।

समय–समय पर सामाजिक रीति–रिवाजों और परम्पराओं में परिवर्तन होने पर इनमें परिवर्तन होता रहता है। सूरदास ने जयदेव तथा विद्यापति की परम्परा को आगे बढ़ाया है। सूरसागर में विविध प्रकार के लोकगीतों पर आधारित पदों की रचना हुयी है।

लोकगीत के ऋतु सम्बन्धी गीत, संस्कारगीत और जातीय गीत तीन भेद माने जाते हैं। ऋतु सम्बन्धी गीतों में सूरसागर का पावस प्रसंग और बसन्तलीला सम्बन्धी पद महत्वपूर्ण हैं। सूरदास ने लोक जीवन में प्रचलित लोकगीतों के आधार पर कृष्ण कथा में इनका वर्णन गेय पदों के रूप में करके उसे लोकगीत का स्वरूप दिया है। सूरसागर के ये पद जनमानस में प्रचलित हैं और पावस तथा बसन्त ऋतु में लोगों द्वारा गाये जाते हैं। बसन्त ऋतु का आगमन जानकर विरहिणी गोपियों को कृष्ण का अभाव और कष्टकर हो जाता है। उनकी व्यथा को सूर ने विभिन्न राग–रागिनियों की गीत शैली में प्रस्तुत किया है। गोपियाँ व्यथित हैं कि वर्षाकाल आ गया है और अब तक संदेश नहीं आया–

अब वरषा को आगम आयो।
ऐसे नितुर भए नन्दनंदन, संदेशो न पठायौ।[4]

गोपियों को लगता है कि कृष्ण के अभाव में बादलो ने प्रहार तेज कर दिया है–

श्याम बिना उनए ए बदरा।[5]

वे परेशान होकर कहती हैं लगता है उस देश में बादल नहीं गरजते–

किधौं धन गरजत नांहि उन देसनि।[6]

बादलों को कृष्ण के रंग का देखकर उनके मन में सहानुभूति जगती है।

ब्रज में पावस ऋतु के गीत सामूहिक उल्लास और आनन्द के प्रतीक हैं। बूँदों के भार से लदा हुआ वृक्ष नन्हीं–नन्हीं बूदियाँ बरसाता हुआ ब्रज नारियों के हृदय में मिठास भर देता है और फिर अकस्मात ही मोर की कुहुँक का हृदय में बस जाना, बगुलों की श्वेत पंक्तिका हार बनकर चित्तको खींचना, बिजली का कौंधना, पपीहों का शोर तथा भूमि की हरियाली उनको विकल बना देती है। पल भर में झूला आकाश से बातें करने लगता है और फिर झूले पर से गाये गये गीत उनके हर्ष को लेकर चारों ओर बिखर जाते हैं। –

झूलत झूलावत, कंठ लावत, बढ़ी आनंद बेलि।
कबंहुक रहसत, मचकि लै,–लै एक–एक सहेलि।
झकझोर झमकत डरति प्यारी, पिया अंकम मेलि।[7]

संस्कारपरक गीतों में सोहर, नेगा के गीत, ननद–भावज, छठी के गीत प्रसिद्ध हैं। विवाह गीत में सगाई, चिट्ठी न्यौतना, भात, व्याह का दिन, भाँवर, वन्दनवार, गारी आदि के गीत मुख्य हैं।सूरसागर में सोहर के गीतों की मधुर व्यंजना हुयी है–

गोरी गनेस्वर वीनऊ (हो), देवि सारद तोहि ।
गावों हरि को सोहिलौ (हो), मन आँखर दै मोहि।
हरशि बधावा मन भयौ (हो), रानी जायौ पूत ।
घर वाहिर मागै सब (हो), ठाढ़े मागध सूत।
आठ मास चन्दन पियौ (हो) नवए पियौ कपूर ।
दसए मास मोहन भए (हो) आंगन बाजैतूर।[8]

सूरसागर के बधाई के गीत भी कम आकर्षक नहीं हैं–

धनि–धनि नन्द जसोमति, धनिजग पावन रे।
धनि हरि लियौ अवतार, सुधनि दिन आवन रे।
दसएँ मास भयौ पूत, पुनीत सोहावन रे।
संख–चक्र–गदा पद्मा चतुरभुज भाँवन रे।
बनि ब्रज सुन्दरि चलीं, सुगाइ बधावन रे।।[9]

सूरदास ने छठी के गीतों का भी मनोहारी वर्णन किया है।

काजर रोरि आनहु (मिली) करौ छठी कौचार।[10]

छठे महीने जब श्रीकृष्ण को अन्नप्राशन कराया जाता है तब स्त्रियाँ मनोहारी गीत गाती हैं–

ललन हों या छवि ऊपर वारी।
बाल गोपाल लागौ इन नैननि, रोग–बलाई तुम्हारी।
लट लटकनि, मोहन मसि बिन्दुका–तिलक भाल सुखकारी।[11]

वर्षगाँठ के अवसर पर माँ एकदम पुकार उठती है–

अरी मेरे ललन की आज वरश–गाँठि,
सबै सखिनि को बुलाइ मंगल–गान करावौं ।।[12]

सूर ने राधा और कृष्ण के गन्धर्व विवाह का बड़ा ही सांगोपांग वर्णन किया है। विवाह के समय जितनी भी प्रथाएँ उस समय प्रचलित रही होगी सूर ने उन सबका वर्णन किया है–

मौर धारण करना–

मोर मुकुट रचि मौर बनायौ। माथे पर धरि हरि वर आयौ।[13]

बाराती तथा बाजे बजाना–

मनमथ सैनिक भये बराती । द्रुम फूले बन अनुपम भाँति ।
सुर बन्दीजन मिलि जस गाये। मधवा बाजा आनन्द बजाए।[14]

मंडप और वेदी–

छाए जू फूलनि कुंज मंडप, फूलनि मैं वेदी रची।

मंडप में गान होना–

बहु विधि आनन्द मंगल गाये, नव फूलन के मंडप छाये ।

गीत और वेद मन्त्रोच्चारण–

गाये जुगीत पुनीत बहु विध, वेद–रव–सुन्दर–धुनी।

पाणिग्रहण और भाँवरि–

तापर पाणिग्रहण विधि कीन्ही, तब मंडप भ्रमि भांवरि दीन्ही।

गालियाँ गाना–

उत कोकिला–गन करें कुलाहल, इत सकल ब्रज नारियाँ।
आई जुतेवते दुहुंदिसि ते, देति आनन्द गारियाँ।।[15]

अस्तु सूरसागर में अनेक संस्कारों का वर्णन हुआ है। ये त्यौहार आज भी ब्रजप्रदेश में इसी प्रकार मनाये जाते हैं। गीत इन संस्कारों की शोभा को गुणात्मक कर देते हैं।

त्यौहार सम्बन्धी गीतों में फूलडोल, फगुआ, रामनवमी, जलबिहार, गंगादशहरा, एकादशी व्रत, रथयात्रा, जन्माष्टमी, सावन, तीज, हिडौंरा, दानलीला, दीपावली, हटरी, अन्नकूट, गोवर्धन पूजा,गोपाष्टमी, रास आदि से सम्बन्धित गीतों का वर्णन सूरसागर में हुआ है। ये त्यौहार ब्रज के जनजीवन में बल्लभ सम्प्रदाय के मन्दिरों में मनाये जाते हैं। अतः सूरदास ने इनका उल्लेख सूरसागर में करके उसे लोकगीत का स्वरूप दिया है। पुरूषों के लोकगीतों का सुन्दर रूप गोचारण प्रसंग में है। ग्वाल गीत गाते और नृत्य करते हैं। टेक लगाकर सुर को लम्बा करने का विधान भी सूरसागर में है।[16]

इन गीतों में होली के गीत विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। ब्रज की होली देश भर में प्रसिद्ध है। होली का उत्सव बसन्त ऋतु में आता है। बसन्तोत्सव का उल्लास साकार रूप ग्रहण करके होली के रूप में फूट पड़ता है। इस उत्सव को ब्रज में फूलडोल भी कहते हैं। होली के गीत अधिकतर पुरूषों द्वारा गाये जाते हैं। ढ़ोल, ढ़प, झांझ, मृदंग और 'करतारों' की तुमुल ध्वनि के बीच गाने वालों की उठती–गिरती स्वर लहरी हठात् मन को अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। होली के अवसर पर गाँव–गाँव मे श्रृंगार का सोता बह निकलता है। सूरदास जी ने होली और बसन्त के विविध प्रकार के गीत लिखे हैं। होली के गीतों को यद्यपि उन्होंने शास्त्रीय रागों, जैसे बसन्त, गौरी, श्रीमलार, टोड़ी, कल्याण, सारंग, जैजैवन्ती, विलावल और काफी आदि में बाँधा है, फिर भी उनमें ग्रामगीतों की लय, शब्दावली, सामूहिक उल्लास और निवैयक्तिकता नितान्त स्पष्ट है। सूर–शास्त्रीय संगीत मे निष्णात् होते हुए भी लोक–होरी की प्रत्यक्ष उमंग का तिरस्कार नही कर सके हैं।[17]

सूरसागर में फागु और होरी का वर्णन यद्यपि एक साथ हुआ है किन्तु जहाँ फागु खेलने में चोव, चन्दन, अबीर, गुलाल के उड़ने और छिड़कने तथा मृदंग, बीन, बासुरी, डफ पर गीत गाने का वर्णन हुआ है वहीं होरी खेलने में, रंग में डुबोने, बाँस की मार पड़ने, गँठजोरी होने और गाली देने का उल्लेख हुआ है। होली के अवसर पर सज–धज कर गोपियाँ यशोदा के घर चार दिन के लिए मोहन को माँगने के लिए जाती हैं।

सब सखियाँ मिलि गई महरि पै, मोहन मागै देहु।
दिना चारि होरी के अवसर, बहुरि आपनो लेहु।[18]

गोपियाँ परस्पर गारी देती है और श्रीकृष्ण से फगुआ देने को कहती हैं। यशोदा गारी न देने तथा श्याम के बदले जो चाहे सो देने की बात कहती हैं।

झुकि–झुकि परति कुवंरि राधिका, देति परस्पर गारि।
अब कह दुरे साँवरे ढ़ोटा, फगुआ देहु हमारि।।[19]

दूसरे दिन श्रीकृष्ण कंचन के माट में रंग भर कर ग्वाल बालों के साथ गाते बजाते वृषभानुकी पौरि पर होली खेलने जाते हैं।

गए वृषभानु की पौरि, लाल रंग होरि।[20]

इन लोगों का उत्तर देने के लिए पहले से तैयार राधा और उनकी सखियाँ पिचकारी से रंग फेकती हैं और गुलाल उड़ाती हैं, झकझोरा–झकझोरी होती है एवं परस्पर गारी दी जाती है।

गावत दै दै गारि परस्पर, उत हरि इत वृषभानु किसोरी।[21]

दोनों ओर इतना गुलाल उड़ता है कि बादल लाल हो जाते हैं और अटारी रंग जाती है।[22]

उड़त गुलाल लाल भए बादल, रंगि गये सिंगरे अटा अटारी।[23]

कृष्ण और ग्वालों पर राथा और गोपियाँ रंग फेंकती हैं, कोई मारती है, कोई दाँव देखती है तथा धर पकड़ होती है। एक ओर सखा वृन्द गारी देते हैं तो दूसरी ओर सखी सब बाँस लेकर मारती हैं।

इस प्रकार होली के अवसर पर व्रज में खूब धमा चौकड़ी होती है जिसका वर्णन सूरसागर में मिलता है। इसी प्रकार रामनवमी त्यौहार व गंगा दशहरा का भी वर्णन मिलता है। वर्षा ऋतु के उत्सवों में जन्माष्टमी विषेश उल्लेखनीय है। जन्माष्टमी का उत्सव पुष्टिमार्ग के आराध्यदेव भगवान श्रीकृष्ण का जन्मदिन होने के कारण बल्लभ सम्प्रदाय में बड़ी धूम–धाम से मनाया जाता है।

उपसंहार–

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सूरसागर लोकगीतों का विपुल भंडार है तथा सूरदास लोकगीतों के पुरौधा। सूरदास के काव्य में जीवन का राग भक्ति, वात्सल्य, श्रृंगार और लोक जीवन के विविध रंगो के साथ मिलकर एक अद्वितीय रस उत्पन्न करता है। कृष्ण के बालरूप का जैसा मनोवैज्ञानिक चित्रण उन्होनें किया है, वैसा चित्रण हिन्दी में ही नही, विश्व की किसी भी भाषा में नहीं मिल सकता। श्रृंगार रस के अन्तर्गत भी सूर की समता करना सहज नहीं है। श्री कृष्ण और राधा के रति–भाव का वर्णन करने में भी उनकी उपमा नहीं मिल सकती। वियोग श्रृंगार के अन्तर्गत भ्रमरगीत नामक प्रसंग में तो सूर की कवित्व शक्ति अपनी चरम सीमा पर पहुँच गयी है। उनके श्रृंगार वर्णन में जयदेव और विद्यापति जैसी लौकिकता नहीं आने पायी है। वियोग की जितनी भी अंतर्दशाएं हो सकती हैं, उन सब का चित्रण सूर के भ्रमरगीत में मिल जाएगा। उन्होंने कृष्ण और यशोदा का जो रूप चित्रित किया है, उसमें माता और पुत्र का विश्वव्यापी प्रेम दिखायी देता है।

सन्दर्भ

1. विश्वनाथ प्रसाद मिश्रः हिन्दी साहित्य का अतीत, (वाणी विज्ञान प्रकाशन, वाराणसीः सं0 2016 वि0) पृ0सं0 202.
2. रामकुमार वर्माः हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ0 सं0 537.
3. आचार्य रामचन्द्र शुक्लः सूरदास पृ0 सं0 176
4. सूरसागर पद सं0 3918
5. सूरसागर पद सं0 3926
6. सूरसागर पद सं0 3929
7. सूरसागर दशम स्कन्ध पद संख्या 2830
8. सूरासागर (सभा) दशम स्कन्ध पद संख्या 40
9. सूरसागर (सभा) दशम स्कन्ध पद संख्या 28
10. सूरसागर (सभा) दशम स्कन्ध पद संख्या 65
11. सूरसागर (सभा) दशम स्कन्ध पद संख्या 91
12. सूरसागर (सभा) दशम स्कन्ध पद संख्या 95
13. सूरसागर (सभा) दशम स्कन्ध पद संख्या 1072

14. सूरसागर (सभा) दशम स्कन्ध पद संख्या 1072
15. सूरसागर (सभा) दशम स्कन्ध पद संख्या1072
16. डॉ0 मान्धाता रायः सूरसागर में लोकतत्व (विजय प्रकाशन मन्दिर, वाराणसी 1995) पृ0 सं0 176
17. सूरसागर में लोकजीवन(हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली 1967) पृ0 सं0 76
18. सूरसागर पद सं0 3484
19. सूरसागर पद सं0 3484
20. सूरसागर पद सं0 3485
21. सूरसागर पद सं0 3487
22. सूरसागर पद सं0 3490
23. सूरसागर पद सं0 3491